(7)

नवल चिन्तन

संतत है सूर्य दीप्यमान् अंतरिक्ष बीच,
भासता हमें परन्तु नवल प्रभात है।
होते हैं विमुख हम खुद ही प्रभाकर से,
तम मे निमग्न प्रिय दीखती सी रात है।
भोगते है कालिमा की क्रूरता विवश होके,
श्रांति को ही शांति मानता विमूढ़ गात है।
और फिर लालिमा को देखके मुदित होते,
खिल जाता ज्योति देख मन जलजात है।। 1 ।।

खोया था न कुछ कुछ पाया भी नवीन नहीं,
जानते हैं विज्ञ सब विस्मृति की लीला है।
था प्रकाश चारों ओर आज भी है विद्यमान,
बार-बार किन्तु हमें घेरती प्रमीला है।
ढ़ाँकती घटा ज्यों भानु ढँक के आधार ही को,
संसृति शुभांगना सदैव नृत्यशीला है।
रवि रश्मि वर्ण अवशोषण प्रक्षेपण है,
हरित न विश्व न ही नीला या कि पीला है।। 2 ।।

सौरभ सराहिए अमंद शुभ्र वारिज का,
आविल सलिल, विष, देखिए न पंक को।
धाम है अमेय जो निगूढ़ प्रति भूत मध्य,
प्रेक्षणीय एक, देखिए न गात्र रंक को।

विज्ञ अवगाहते कराब्धि में सुधाकर की,
किंतु मूढ़ बुद्धि मापते मयंक अंक को।
होते क्या पुरस्कृत हैं, स्वप्नकृत दान-पुण्य,
ढोता कौन स्वप्न के कुकृत्य के कलंक को।। 3 ।।

दिनांक 01 जनवरी-2003

शिव कुमार मिश्र